P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-4* ISSUE-2* May (Part-1)- 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

भारत पर ब्रिटिश आधिपत्य

राजेश कुमार सुमन
शोधार्थी,
राजनीति शास्त्र विभाग,
ल0 ना0 मि0 वि0 विद्यालय,
दरभंगा, बिहार, भारत

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय ब्रिटिश अधिपत्य का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। इसमें साम्राज्यवादी व्यवस्था के अन्तर्गत आने वाले प्रमुख रूप से तीन मुद्दे पर ईस्ट इण्डिया कम्पनी पर क्या प्रभाव रहा है, 19वीं सदी के अन्तर्गत ब्रिटिश शासन द्वारा इसपर कितना जधन्य अपराध किया गया था, इन सभी मुद्दो पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया गया है। भारत पर दन कम्पनी के द्वारा व्यापार करने का क्या उद्देश्य था। भारत पर प्रभुत्व कायम करना ही उनका उद्देश्य था। धीरे–धीरे बाहरी कम्पनियां तथा वहाँ के शासक वर्ग कम्पनी प्रसार तथा अन्य लुभावने कार्यक्रमों के द्वारा भारत पर अपना साम्राज्य स्थापित किया, और भारत के लोग चाहे–अनचाहे उसके अनुकुल बनते गये। इंगलैण्ड के शासक द्वारा किन चीजों की आवश्यकता है, भारतीय कमजोरी को अच्छी तरह परखकर उस चीज की पूर्ति कर उसपर काफी प्रभाव डालकर अपना साम्राज्य कायम किया। यही शोधपत्र का मुख्य उद्देश्य है।

मुख्य शब्द : ब्रिटिश साम्राज्यवादी, ईस्ट इण्डिया कम्पनी उत्तरार्द्ध, सक्रमण, उजारेवादी, उपनिवेश, वेस्टइन्डीज, आधिपत्य, नुमाईस्ते, ऐजेन्सी, सौदेवाजी, गुमास्तो, दुरूप्योग, असमर्थता, उपकर्म, जन षून्यता, विश्वासघाती, पौंड स्टालिंग

प्रस्तावना

भारतीय साम्राज्यवादी शासन के इतिहास में मुख्यतः तीन युग सामने आते है, जिनमें प्रथम युग व्यापारिक पूंजी का है, जिसका प्रतिनिधित्व ईस्ट इण्डिया कंपनी ने किया। इस व्यवस्था का साधारण स्वरूप 18वीं सदी के अंत तक चला। दूसरा युग औद्योगिक पूंजी का युग है, जिसनें 19वीं सदी में भारत के शोषण का एक नया आधार कायम किया। तीसरा युग महाजनी पूंजी का आधुनिक युग है, जिसने पुराने अवशेषो पर भारत के शोषण को अपने ढंग की खास प्रणाली विकसित की और जो सर्वप्रथम 19वीं सदी के अंतिम वर्षों में शुरू हुई और हाल के वर्षों तक पूरी विकसित हुई। ब्रिटिश शासन द्वारा इस देश पर जितने भी अत्याचार हुए, उस पर टिप्पणी करते हुए लेनिन ने कहा था– उस हिंसा और लूट की कोई सीमा नहीं है, जिसे भारत में ब्रिटिश शासन के नाम से जाना जाता है।[1]

आमतौर पर ईस्ट इण्डिया कंपनी का समय 1600 ई0 से, जब उसे पहला सरकारी अधिकार पत्र मिला था, 1858 ई0 तक वह अंतिम रूप से सम्राट के अधीन चला गया माना जाता है। संभवतः भारत पर इसके आधिपत्य का मुख्य काल 18 वीं सदी का उत्तरार्द्ध था। हालाकि प्रारंभिक तिजारती गोदामों की स्थापना 18 वीं शताब्दी में ही हो चुकी थी। 1612 में सूरत में, 1639 में फोर्ट सेंट जॉर्ज, मद्रास में तथा बम्बई ने 1669 से और फोर्ट विलियम, कलकत्ता ने 1696 में कंपनी को पट्टा दिया था। फिर भी नई ईस्ट इण्डिया कंपनी को जिसने बाद में भारत पर विजय हासिल की पहला अधिकार पत्र 1698 ई0 में मिला और वह 1708 तक संगठित रूप नहीं बना सकी। इस तरह भारत पर विजय हासिल करनेवाली ईस्ट इण्डिया कंपनी उस कुलीन तंत्र की एक अद्भुत रचना थी, जिसने। क्रान्ति के जरिये इग्लैण्ड पर अपनी पकड़ मजबूत की थी।

18 वीं सदी के भारत की खास बात विभ्रम और संक्रमण के इस नाजुक युग ने ही विदेशी हमलावरों को अपने अधिकार क्षेत्र कायम करने के लिए संघर्ष और शड्यंत्र का अवसर दिया एक अपने के खिलाफ छिड़े इस युद्ध में पूंजीपतियों की सर्वाधिक विकसित षक्ति के प्रतिनिधि ब्रिटिश पूंजीपति वर्ग को सफलता मिली। 18 वीं सदी के उत्तरार्द्ध में बंगाल की विजय के साथ भारत में प्रादेशिक सत्ता की स्थापना की गई। हालाकि शुरू में नाममात्र के लिए पुराने रूपों के तहत थी। 19 वीं सदी की शुरूआत में भारत में सर्वोच्च सत्ता के रूप में इनका मजबूती से प्रसार हो गया था।

भारत के साथ ईस्ट इण्डिया कंपनी के व्यापार का मूल उद्देश्य ठीक नहीं था, जो व्यापारिक पूंजी की इजारेदारी कंपनियों का होता है। समुद्रपार के किसी देश के माल और उत्पादनों के व्यापार पर एकाधिकार कायम करके मुनाफा कमाना। इसका मुख्य लक्ष्य ब्रिटिश माल के लिए बाजार तलाश करना नहीं था वल्कि उसका प्रयास भारत और पूर्वी द्वीप के सामान की सप्लाई पर कब्जा करना था, क्योंकि इंगलैण्ड और यूरोप में इन चीजों की बड़ी मांग थी और हर बार पूरब के देशों की सफल यात्रा के बाद काफी लाभ कमाया जा सकता है। 17 वीं शताब्दी के प्रारंभ में विकास की जिस अवस्था तक इंग्लैण्ड पहुँच सका था, उसमें भारत को देने के लिए कोई भी ऐसी चीज उनके पास नहीं थी जिसकी उत्तमता और तकनीकी स्तर के मामले में भारतीय सामान से तुलना की जा सके। उसके पास एक उद्योग विकसित अवस्था में था, ऊन उद्योग, लेकिन उनी सामान भारत में किसी काम का नही था, इसलिए भारत में माल खरीदने के लिए अंग्रेजों को बहुमूल्य धातुएँ बाहर लानी पड़ती थी।

पूरब के साथ व्यापार करने में असली कठिनाई यह थी कि यूरोप के पास वे चीजें बहुत ही कम थी, जिसकी जरूरत पूरब को थी। दरबारों के लिए विलासिता का कुछ सामान सासा, मुंगा, ताँबा, पारा, टिन और हाथी दाँत/चाँदी ही एक ऐसी चीज थी जो भारत ले सकता था, इसलिए माल खरीदने के लिए मुख्यतया चाँदी हीं निकालनी पड़ी।

शुरू से ही ईस्ट इण्डिया कंपनी के साहसिक सौदागर इस समस्या को हल करने का जोर–शोर से प्रयास कर रहे थे। वे इस कोशिश में थे कि विना कुछ पैसा दिए या कम राशि देकर भारत से माल ले लिया जाय। शुरू से जो तरीके इन्होने निकाले, उनमें से एक तरीका घुमा–फिराकर व्यापार करना था। इसके अन्तर्गत के खास तौर से अफ्रीका और अमेरिका के अपने उपनिवेषों से लूट–खसोट द्वारा जो माल इकट्ठा करते थे, उससे भारत में अपने रहने का खर्चा निकाल लेते थे, क्योंकि भारत में अभी सीधे लूट–खसोट करने की ताकत नहीं थी।

भारत के पास इग्लैण्ड का व्यापार दरअसल यह खोज निकालने की दौड़ थी कि भारत को कौन सी चीज चाहिए और इस सिलसिले में वेस्टइंडीज और स्पानी अमेरीका में गुलामों की विक्री से प्राप्त चाँदी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण थी। [5]

18 वीं सदी के मध्य तक जैसे–जैसे भारत पर कंपनी का आधिपत्य होने लगा, विनियम में अपना पलड़ा भारी रखने के लिए कम से कम पैसे देकर अधिक माल हड़पने के लिए कंपनी द्वारा बल प्रयोग के तरीके भी अधिक से अधिक इस्तेमाल किया जाने लगा। व्यापार और लूट के बीच की विभाजन रेखा, जो शुरू से ही कभी साफ–साफ नहीं खींची गई थी, अब धुंधली पड़ने लगी थी। व्यक्तिगत उत्पादन कर्ताओं चाहे वे बुनकर हो या किसान, की तुलना में कपंनी का सौदागर हमेषा ऐसी अनुकूल स्थिति में होता था किवह अपनी शर्ते उन पर थोप सकें। वह जब इस लायक हो गया था कि विनिमय की समानता के सभी ढ़ोंग छोड़कर ताकत के बल पर अपने पक्ष में सौदेबाजी कर सके। 1762 तक ऐसी हालत हो गई कि बंगाल के नवाब को बहुत निरीह बनकर कंपनी के एजेण्टों की शिकायत कंपनी के सामने करनी पड़ी।

वे किसानों, व्यापारियों आदि से जबर्दस्ती एक चौथाई कीमत पर उनके माल और उसके उत्पादन हड़प रहें है, और किसानों आदि को मारपीट कर उनका दमन कर वे अपनी एक रूपये की चीज 5 रूपये में बेच रहे हैं।[6] इसी तरह एक अंग्रेज सौदागर ने इसका वर्णन करते हुए लिखा–

अंग्रेज अपने बनियों और काले नुमाइस्ते के जरिये मनमाने ढंग से यह तय कर देते है कि माल तैयार करने वाला हर निर्माता उन्हें कितना माल देगा और बदले में उसे कितनी कीमत मिलेगी। गरीब बुनकर की मजदूरी को आमतौर पर जरूरी नहीं समझा जाता है। जहाँ तक नुमाइस्तों का सबाल है, कंपनी की लागत पर काम देते समय उनसे कंपनी की मर्जीवाली शर्तों पर हस्ताक्षर करा लिया जाता है। यदि कोई बुनकर वह दाम लेने से इन्कार कर देता पर जो कंपनी देती थी, तो उसके हाथ–पैर बाँध दिए जाते थे तथा कोड़े मारकर उन्हे भगा दिया जाता था। आमतौर पर इस तरह से अनेक बुनकरों का नाम कंपनी के पंजी में गुमास्तों के रूप में दर्ज है। उन्हें गुलामों की तरह एक स्थान से दूसरे स्थान भेज दिया जाता था और उन्हें किसी दूसरे के लिए काम करने की इजाजत नहीं दी जाती थी इस विभाग में जितना छल–कपट होता था, वह कल्पना से बाहर की बात थी कंपनी के गुमास्तों और उनकी साजिश का साथ देने वाले जाँचकर्ता द्वारा जो दाम तय किया जाता था, वह बाजारों या खुली दर पर बिकनेवाले इसी तरह के कपड़ों की तुलना में 15 प्रतिशत और कही–कही तो 40 प्रतिशत कम होती थी।[7]

व्यापक पैमाने पर बेशर्मी के साथ जो लूट–पाट शुरू हुई, उसने 18 वीं सदी के उत्तरार्द्ध में कंपनी प्रषासन को इतिहास का एक अर्थहीन शब्द बना दिया। संसदीय जाँच नतीजों से पता चला कि ईस्ट इण्डिया कंपनी अपने उद्देश्य में चाहे वे राजनीतिक हो या व्यापारिक, पूरी भ्रष्ट और विकृत पायी गई। उसने हर क्षेत्र में तीव्रतर विरोध करते हुए लूटमार के मकसद की पूर्ति के लिए राजकीय अधिकार पत्र द्वारा प्रदत्त युद्ध और शांति के अधिकारों का दुरूपयोग किया है। शांति सम्बन्धी लगभग सभी संधियों के द्वारा उन्होनें जनता के विश्वास को अनेक बार आघात ही पहुँचाया है। जो देश एक समय अपार समृद्ध था, उन्हें इस कंपनी ने असमर्थता, अपकर्म और जनशून्यता की स्थिति में ला दिया, इसके साथ ही अपनी भूमिका के बारे में कंपनी की खुद की राय भी देखी जा सकती है जो उसने 1858 में संसद में प्रस्तुत याचिका में व्यक्त किया था। जिस सरकार के वे एक हिस्सा है, वह अपने इरादों में पवित्रतम ही नहीं है वल्कि उसने परोपकारिता के जो काम किए है, वह मानव जाति के लिए अब तक के लिए गए कार्यों में वेमिसाल है। एक चिन्तक ने संसद में एलान किया कि–[9] मै पूरे विश्वास के साथ कहता हूँ कि इस धरती पर आज तक

कोई भी सभ्य सरकार इतनी भ्रष्ट, विश्वासघाती और इतनी लूटेरी नहीं हो पायी, जितनी 1765 से 1784 तक ईस्ट इण्डिया कंपनी की सरकार थी।

1765 में क्लाइव ने कंपनी के निदेशक के नाम एक पत्र लिखकर बड़े सहज और स्पष्ट रूप से बताया है कि प्रषासन अपने हाथ में लेने के लिए कंपनी के पास एकमात्र योग्यता ये होनी चाहिए किवह मुनाफे के रूप में एक निश्चित राशि इग्लैण्ड भेजे। क्लाइव ने कहा–जहाँ तक मै समझता हूँ इस अधिग्रहण और वर्दवान आदि पर पूर्व से चले आ रहे आपके कब्जे द्वारा आगामी वर्षो में मिलनेवाला राशि 250 लाख सिक्का रूपयों से कम नही होगा। भविष्य में यह राशि बढ़कर 20 से 30 लाख होगी। शांति के दिनों में सैनिक और असैनिकों का व्यय 60 लाख रूपये से ज्यादा नहीं हो सकता। नवाव का भत्ता पूर्व से ही कम करके 42 लाख रूपये और मुगल सम्राट के नजराने 26 लाख रूपये कर दिए गए है। इस प्रकार कंपनी को 122 लाख सिक्का रूपये या 1,650,000 पौंड स्टलिंग का विशुद्ध लाभ बचा रहेगा।[10]

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध आलेख मे 'भारत पर ब्रिटिश' आधिपत्य भारतीय समाजवादी व्यवस्था पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया गया है । जो वर्तमान शोध प्रयोग मवेयशको एंव विषय विशेषज्ञयो के लिए पाठ्य का काम करेगा ।

निष्कर्ष

लार्ड कार्नवालिस ने गवर्नर जनरल की हैसियत से यद्यपि इसमें काफी सुधार हुआ इन सारे उपायों द्वारा सारे पूंजीपति वर्ग के हित में भारत का अधिक वैज्ञानिक ढंग से शोषण करने के लिए आधार तैयार किया गया था। इन परिवर्तनों ने औद्योगिक पूंजी द्वारा शोषण के नए चरण का मार्ग तैयार किया, जिसे आज भी देखा जा सकता है।

अंत टिप्पणी

1. *लेनिन– इन्फ्लेमेबुल मैटेरियल इन वर्ल्ड पॉलिटिक्स – 1908, पृष्ठ – 115*
2. *रजनीपाम दत्त– आज का भारत मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड – 1996, पृष्ठ – 123*
3. *उपर्युक्त – पृष्ठ – 124*
4. *एल0 सी0 ए0 नॉवेल्स – इकॉनोमिक डेवलपमेन्ट ऑफ द ऑवरसीज इंपायर, पृष्ठ – 73*
5. *उपर्युक्त – पृष्ठ – 74*
6. *अंग्रेज गवर्नर के नाम बंगाल के नबाब का ज्ञापन पत्र – मई 1762*
7. *विलियम बोल्ट्स – कंसिडरेशंस ऑन इण्डियन अफेयर्स – 1772,*
8. *पृष्ठ – 191–94*
9. *हाउस ऑफ कॉमन्स के 1784 के प्रस्ताव के अनुसार*
10. *हाउस ऑफ कॉमन्स में जार्ज कार्नवलिस का वयान – 12 फरवरी 1858*
11. *ईस्ट इण्डिया कंपनी के निदेशक के नाम क्लाइव का पत्र – 30 सितम्बर 1765*